स्वामी दयानंद सरस्वतींच्या विचारांची प्रासंगिकता

(२०० व्या जयंतीनिमित्त विशेष अंक)

संपादक

श्री. गणेशकुमार सोपानराव पेठकर

संस्कृत विभाग प्रमुख, संजीवनी महाविद्यालय, चापोली
ता. चाकूर, जि. लातुर,

सिध्दी पब्लिकेशन हाऊस, नांदेड.

ISBN No. 978-81-976041-9-5

स्वामी दयानंद सरस्वतींच्या विचारांची प्रासंगिकता

(२०० व्या जयंतीनिमित्त विशेष अंक)

❖ **संपादक**

श्री. गणेशकुमार सोपानराव पेठकर

संस्कृत विभाग प्रमुख

संजीवनी महाविद्यालय, चापोली, ता. चाकूर, जि. लातुर,

मो. नं. 9511602795

Email. ID. – ganeshk1215@gmail.com

❖ **प्रकाशक**

सिद्धि पब्लिकेशन हाउस,

बेलानगर, भावसार चौक, तरोड़ा खु. नांदेड.

मो. नंबर ९६२३९७९०६७

www.wiidrj.com

❖ **मुद्रक**

अनुपम प्रिंटर्स, श्रीनगर, नांदेड.

प्रथमावृत्ती : जानेवारी २०२५

© **सर्वाधिकार संपादकाच्या अधीन**

मुखपृष्ट : तेजस रामपुरकर

अक्षजुळवणी : सौ. पल्लवी शेटे

मूल्य : **४००**

सदरील ग्रंथातील कोणताही भाग किंवा मजकुराकरीता सदरील संशोधक स्वतः जबाबदार राहतील संपादक किंवा प्रकाशक जबाबदार असणार नाही.

अनुक्रमणिका

अ. क्र.	प्रकरणाचे नांव	लेखक	पृ. क्र.
१.	**Enlightened Pathways: Educational and Socio-Philosophical Legacy of Swami Dayanand Saraswati**	**Pravin Tambat**	११
२.	**Swami Dayanand Saraswati and the Nationalist Awakening: Impacts on the Princely States in Colonial India**	**Dr. Ashwini Khandekar**	२३
३.	**'हिंदी भाषा के विकास में स्वामी दयानंद सरस्वती का योगदान'**	**डॉ. पांडुरंग ज्ञानोबा चिलगर**	४३
४.	**महर्षि दयानंद सरस्वती का सर्वतन्त्र सिद्धांत अथवा सर्वतंत्र / वैदिक मानववाद**	**प्रा. डॉ. विनोदकुमार विलासराव वायचळ**	५०
५.	**स्वामी दयानंद सरस्वती यांचे जीवन आणि तत्त्वज्ञान**	**डॉ. भुसारे सुनंदा रामचंद्र**	५९
६.	**स्वामी दयानंद सरस्वती यांचे स्वातंत्र्य संग्रामातील योगदान**	**प्रा. डॉ. मोरे बब्रुवान केरबाजी**	६८
७.	**“धर्म, शिक्षण आणि समाज: स्वामी दयानंद सरस्वती यांचा समग्र दृष्टिकोन ”**	**प्रा. डॉ. शिवाजी गोरक्षनाथ ढोकणे**	७८

महर्षि दयानंद सरस्वती का सर्वतन्त्र सिद्धांत अथवा सर्वतंत्र / वैदिक मानववाद

प्रा. डॉ. विनोदकुमार विलासराव वायचळ
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, व्यंकटेश महाजन वरिष्ठ महाविद्यालय, धाराशिव – ४१३५०१ (महाराष्ट्र)

समग्र क्रांति के अग्रदूत, वेदों के उद्धारक, आर्य समाज के संस्थापक, महर्षि दयानंद सरस्वती द्वारा प्रतिपादित मानववाद सर्वतंत्र सिद्धांत या सर्वतंत्र मानववाद या वैदिक मानववाद नाम से जाना जाता है।

महर्षि दयानंद सरस्वती ने अनेक ग्रंथों की रचना की। इनमें सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि और ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका ये तीन ग्रंथ अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन्हें आर्य समाज की प्रस्थानत्रयी भी कहा जाता है। सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानंद सरस्वती का मानववादी चिंतन का ब्यौरा प्राप्त होता है।

प्रायः यह कहा जाता है कि, महर्षि दयानंद सरस्वती ने वेदों की ओर लौटो का नारा लगाया था। महर्षि दयानंद सरस्वती के जीवन एवं साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान डॉ० भवानीलाल भारतीय के अनुसार इस नारे का स्रोत कहीं भी प्राप्त नहीं होता। तथापि यह सत्य तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि महर्षि दयानंद ने ही सर्व प्रथम वैदिक चर्चा का पुनरूद्धार किया और वेदों को मानव जीवन के साथ जोड़ दिया। उन्होंने वेदों में ही मानववाद की उदात्त विचारधारा को देखा था। वेदों में जो कुछ कहा गया है,

किसी विशिष्ट वर्ग, वर्ण, वंश, नस्ल, देश, प्रदेश, भाषा आदि को लक्ष्य रखकर नहीं कहा गया है। वेदों के अनेक मंत्रों में वेद पठन के अधिकार का वर्णन करते हुए कहा है -

यथेमां वाचं कल्याणीं आवदानि जनेभ्यः ।

ब्रह्मराजन्याभ्यां आर्याय उत शूद्राय उत चारणाय ।।' [१]

वेदों में मनुष्य मात्र के प्रति मित्रता का भाव दिखाई देता है। यजुर्वेद में कहा है -

दृते दृंह मा मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे । मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।। ' [२]

यजुर्वेद में ही मानव की संस्कृति को समस्त विश्व में व्यापक विश्ववारा संस्कृति कहा गया है।

ओ३म् अच्छिन्नस्य ते देव सोम सुवीर्यस्य रायस्पोषस्य ददितारः स्याम।

सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा स प्रथमो वरुणो मित्रो अग्निः ।। [३]

यदि संसार के समस्त मानव ही नहीं सारे प्राणी हमारे विश्वसनीय मित्र हैं, तो हमारा किसी से भी भयभीत होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता । यजुर्वेद की प्रार्थना है कि संसार में हम जहाँ कहीं, जो भी चेष्टा करते हैं, ईश्वर हमें वहाँ निर्भीक बनाये। हम मानवी प्रजा तथा पशु-जगत् से निर्भीक रहें ।

यतो यतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु ।

शं नः कुरु प्रजाभ्योऽ अभयं नः पशुभ्यः ।। [४]

वेदों में समस्त जगत् को एक ऐसा नीड़ कहा गया है जिसमें संपूर्ण प्राणिजगत् सुख-पूर्वक निवास करता है। यह विश्वनीड़ स्वयं सच्चिदानंद परमात्मा है।

वेनस्तत्पश्यन्निहतं गुहा सद्यत्र विश्वं भवत्येऽकनीडम् ।
तस्मिन्निदं सं च वि चैति सर्वं स ओतः प्रोतश्च विभुः प्रजासु ।।[९]

महर्षि दयानंद सरस्वती ने वेदों में विद्यमान इस मानववाद को परखा था, देखा था, समझा था तथा वे इसके प्रचार-प्रसार के इच्छुक थे। जब उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की तो उसके छठें नियम में इसका मुख्य उद्देश्य संसार का उपकार करना ठहराया।

संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक और सामाजिक उन्नति करना ।

यदि महर्षि दयानंद सरस्वती की दृष्टि संकुचित या संकीर्ण होती या वे किसी विशिष्ट जाति, वर्ग, वर्ण, देश, प्रदेश, भाषा आदि के हित का चिंतन करते तो संसार का व्यापक हित उनकी कार्य योजना का अंग नहीं बनता। व्यक्ति और समाज के हितों का सापेक्षित महत्व बतानेवाला तथा व्यष्टि और समष्टि हितों की अन्योन्य निर्भरता बतानेवाला आर्य समाज का नौवां नियम तथा दसवाँ नियम महर्षि दयानंद सरस्वती के व्यापक मानवीय दृष्टिकोण का परिचायक है।

प्रत्येक को अपनी उन्नति में संतुष्ट नहीं रहना चाहिये, किंतु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतंत्र रहें ।

महर्षि दयानंद सरस्वती की दृष्टि में मनुष्य सर्वोपरि है । महाभारत की सुक्ति अथवा वेदव्यास की आर्षवाणी

गुह्यं ब्रह्म तदिदं वो ब्रवीमि । नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित् ।। [६]

को उन्होंने माना और अपने हृदय अथवा अंतस्थल से स्वीकार किया। उनकी दृष्टि में श्रेष्ठ मनुष्य कौन है ? सत्यार्थ प्रकाश के निष्कर्ष स्वमंतव्यामंतव्य प्रकाश प्रकरण में वे लिखते हैं -

"मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं, किंतु अपने सर्वसामर्थ्य से धर्मात्माओं की, चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान् भी हो, तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें, अर्थात् जहाँ तक हो सके, वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वदा किया करें। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परंतु इस मनुष्य रूप धर्म से पृथक कभी न होवे ।"[७]

महर्षि दयानंद सरस्वती की दृष्टि में यही मनुष्य रूप धर्म है। अनाथ और निर्बल की सहायता करने को अनेक लोक आगे आ सकते हैं, किंतु सबल अधर्मात्मा का अप्रियाचरण करने का साहस बहुत कम लोग ही बटोर पायेंगे। धर्मात्मा और अधर्मात्मा के प्रति इस प्रकार का संतुलित आचरण निर्दिष्ट करना महर्षि दयानंद सरस्वती के चिंतन की विशेषता है।

महर्षि दयानंद सरस्वती को महाराज भर्तृहरि का एक नीति श्लोक अत्यंत प्रिय था जिसमें कहा गया है कि, सच्चा धैर्यवान् मनुष्य वह है जो सत्य, न्याय और धर्म के पथ से कभी विचलित नहीं होता। न्यायनिष्ठ व्यक्ति को ही धीर पुरुष कहना चाहिये। उसकी विशेषता है कि, वह निंदा-स्तुति, मान-अपमान, संपन्नता-दरिद्रता तथा जीवन-मृत्यु की स्थिति में अपना धैर्य नहीं खोता और न्याय इसे वे प्रसंग प्राप्त होने पर धर्म और सत्य भी कहते हैं, के पथ से कभी नहीं हटता।

निन्दन्तु नीतिनिपुणाः यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥ ८

महर्षि दयानंद सरस्वती को महामति विदुर का वह श्लोक भी प्रिय था जिसमें कहा गया है कि, संसार में मधुर भाषी लोग तो बहुसंख्याक हैं, किंतु ऐसे लोग नितांत अल्प हैं जो अप्रिय, किंतु पथ्यकारक या लाभप्रद बात कहते हैं, ऐसी बात को सुननेवाले तो और भी कम हैं।

सुलभा पुरुषाः राजन् सततं प्रियवादिनः।

अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः ।। [९]

मानव मात्र के लिए मानने योग्य, हितपूर्ण बातों को महर्षि दयानंद सरस्वती सर्वतंत्र सिद्धांत कहते हैं जिसमें लेशमात्र भी पक्षपात नहीं रहता। उनका कहना है कि, यदि सारे विद्वान एकमत हो जायें तो वे संसार का हित करने में सक्षम होंगे। महर्षि दयानंद सरस्वती द्वारा सत्यार्थ प्रकाश में दी गई मतमतांतरों की समीक्षा और आलोचना सर्वथा पक्षपात रहित है। सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में वे लिखते हैं कि -" क्योंकि मैं भी किसी एक मत या संप्रदाय का पक्षपाती होता जैसे कि आजकाल के लोग स्वमत की स्तुति, मंडन और प्रचार करते हैं और दूसरे मत की निन्दा, हानि और उसे बंद कराने में तत्पर रहते हैं, वैसे मैं भी होता, परंतु ऐसी बातें मनुष्यपन से बाहर हैं।"[१०]

इस उद्धरण में महर्षि दयानंद सरस्वती मतमतांतरों के बारे में विचार करते समय पक्षपात तथा एकांगीपन को मानवता विरोधी मानते हैं। महर्षि दयानंद सरस्वती की दृष्टि में – "जो बलवान होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थवश होकर पर हानिमात्र करता रहता है वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।" [११]

सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहँवें समुल्लास की अनुभूमिका में महर्षि दयानंद सरस्वती का मानवतावादी स्वर पुनः मुखर हुआ जहाँ उन्होंने लिखा – "मनुष्य जन्म का होना सत्यासत्य के निर्णय करने कराने के लिए है न कि वाद-विवाद, विरोध करने - कराने के लिए।" [१२]

महर्षि दयानंद सरस्वती का विश्वास था कि जब तक इस मनुष्य जाति से परस्पर मिथ्या मतमतांतर का विरुद्धवाद न छूटेगा, तब तक अन्योन्य को आनंद न होगा । यदि हम सब मनुष्य और विशेष विद्वज्जन ईर्ष्या-द्वेष छोड़ सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना कराना चाहें तो हमारे लिए यह असाध्य नहीं है ।

यदि इस कथन की यदि व्याख्या की जाये और इसमें निहित भाव का विस्तार किया जाये तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि, यद्यपि विचारशील मनुष्यों में मत- संप्रदाय, राजनीति तथा आर्थिक प्रश्नों आदि को लेकर मत भिन्नता स्वाभाविक बात है, किंतु यदि इन्सान ठान ले तो एक मेज के इर्द-गिर्द बैठकर वह अपने पारस्पारिक मतभेदों को दूर कर सकता है । उस स्थिति में हिंदू-मुसलमान, मुसलमान-यहुदी, पूँजीपति-मजदूर, काले-गोरे के पारस्पारिक द्वंद्वों के समाप्त होने में देर नहीं लगेगी। अंततः महर्षि दयानंद सरस्वती प्रार्थना करते हैं कि - सर्वशक्तिमान परमात्मा एक मत में प्रवृत्त होने का उत्साह सब मनुष्यों के आत्माओं में प्रकाशित करें। हम पंचायतों से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ तक एकमत आज की भाषा में सर्वसम्मत निर्णय पर पहुँचने के लिए क्या सचेष्ट नहीं हैं ? महर्षि दयानंद सरस्वती के कथन का भी यही अभिप्राय है।

महर्षि दयानंद सरस्वती की दृष्टि में मनुष्य को सदा सत्य का पक्ष लेना चाहिये । सत्यार्थ प्रकाश के बारहवें समुल्लास की अनुभूमिका में वे अपना मंतव्य प्रकट करते हुए कहते हैं कि, “सत्य के जय और असत्य के क्षय के अर्थ मित्रता से वाद या लेख

करना हमारी मनुष्य जाति का मुख्य काम है। यदि ऐसा न हो तो मनुष्यों की उन्नति कभी न हो ।"[१३] इस नीति- वाक्य की अनुगूँज महर्षि दयानंद सरस्वती के उपर्युक्त वाक्य में स्पष्टतः सुनाई देती है। वह मनुष्य ही है जो परस्पर प्रेमयुक्त वाद या लेख के द्वारा अपना वैर-विरोध दूर करता है, यदि उसमें मात्र पशुता होती तो एक हड्डी के लिए एक-दूसरे को लहुलुहान कर देने वाले तथा हो जाने वाले कुत्तों की तरह वह स्वयं को नष्ट कर देता । तथापि मनुष्य सर्वगुणसंपन्न भी नहीं है। महर्षि दयानंद सरस्वती के मत में बहुत-से मनुष्य ऐसे हैं जिनको अपने दोष तो नहीं दिखते, किंतु दूसरों के दोष देखने में वे अति तत्पर रहते हैं। यह न्याय की बात नहीं है। क्योंकि प्रथम अपने दोष निकालें पश्चात् दूसरों के दोषों की ओर दृष्टिपात करें। डॉ॰ भवानीलाल भारतीय के मत में मनुष्यता की इससे उपयुक्त अन्य कोई परिभाषा नहीं हो सकती।

महर्षि दयानंद सरस्वती को मनुष्य की क्षमता में विश्वास था । वे मनुष्य की सत्यासत्य का विवेक करने में सक्षम बुद्धि, न्याय और अन्याय के पार्थक्य को समझने की शक्ति तथा धर्म-अधर्म एवं कर्तव्यअकर्तव्य का निर्णय करने की योग्यता के कायल थे। सत्यार्थ प्रकाश के तेरहवें समुल्लास की अनुभूमिका में वे लिखते हैं- मनुष्य का आत्मा यथायोग्य सत्यासत्य के निर्णय करने का सामर्थ्य रखता है। जितना अधिक पठित अथवा श्रुत है उतना निश्चय कर सकता है। इस तथ्य के आधार पर वे मानते हैं विभिन्न मतसंप्रदायों के अनुयायियों को एक-दूसरे के विचारों और मान्यताओं से परिचित होना चाहिये। परस्पर संवाद

या विचार विमर्श तभी संभव है जब हम एक दूसरे के विचारों का पहले से ज्ञान रखें। उनकी मान्यता थी कि सत्य को लेकर मानव समाज का एक होना असंभव नहीं है। जो-जो सर्वमान्य सत्य विषय हैं, वे तो सबमें एक-से ही हैं। झगड़ा झूठे विषयों में चलता है। यदि वादी प्रतिवादी सत्यासत्य निश्चय के लिए वाद-प्रतिवाद करें तो अवश्य सत्य का निश्चय हो जाये। महर्षि दयानंद सरस्वती की दृष्टि में मानव की यह मूलभूत एकता ही सर्वतंत्र मानववाद है जिसे वे सामान्य सार्वजनिक मानव धर्म कहते हैं।

संदर्भ :-

1. यजुर्वेद अध्याय २६ मन्त्र २
2. यजुर्वेद अध्याय ३६ मन्त्र १८
3. यजुर्वेद अध्याय ७ मन्त्र १४
4. यजुर्वेद अध्याय ३६ मन्त्र २२
5. यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ८
6. महाभारत शांतिपर्व - महर्षि वेदव्यास अध्याय २९९ श्लोक २०
7. सत्यार्थ प्रकाश - महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वमंताव्यमंतव्य, पृ. ५८५-५८६
8. नीतिशतक - भर्तृहरि श्लोक ८४
9. विदुरनीति प्रजागर - महात्मा विदुर, अध्याय ५ श्लोक १५
10. सत्यार्थ प्रकाश - महर्षि दयानन्द सरस्वती, भूमिका पृ. ५
11. सत्यार्थ प्रकाश - महर्षि दयानन्द सरस्वती, भूमिका पृ. ५
12. सत्यार्थ प्रकाश - महर्षि दयानन्द सरस्वती, ग्यारहँवें समुल्लास के अनुभूमिका पृ. २७१
13. सत्यार्थ प्रकाश - महर्षि दयानन्द सरस्वती, बारहँवें समुल्लास के अनुभूमिका पृ. ३९५

***